ओरालियकायजोगी-ओरालियमिस्सकायजोगीणमंतरं केवचिरं कालादो होदि ? ॥ ६५ ॥

सुगमं

जहण्णेण एगसमओ ॥ ६६ ॥

कुदो ? ओरालियकायजोगादो मणजोगं वचिजोगं वा गंतूण एगसमयमच्छिय विदियसमए वाघादवसेण ओरालियकायजोगं गदस्स एगसमयअंतरुवलंभादो। ओरालिय-मिस्सकायजोगिस्स अपज्जत्तभावेण मण-वचिजोगविरहियस्स कथमंतरस्स एगसमओ ? ण, ओरालियमिस्सकायजोगादो एगविग्गहं करिय कम्मइयजोगम्मि एगसमयमच्छिय विदियसमए ओरालियमिस्सं गदस्स एगसमयअंतरुवलंभादो।

उक्कस्सेण तेत्तीसं सागरोवमाणि सादिरेयाणि ॥ ६७ ॥

औदारिककाययोगी और औदारिकमिश्रकाययोगी जीवोंका अन्तर कितने काल तक होता है ? ॥ ६५ ॥

यह सूत्र सुगम है।

औदारिककाययोगी और औदारिकमिश्रकाययोगी जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय होता है ॥ ६६ ॥

क्योंकि, औदारिककाययोगसे मनयोग या वचनयोगमें जाकर एक समय रहकर दूसरे समयमें योगका व्याघात होनेसे औदारिककाययोगमें आये हुए जीवके औदारिक-काययोगका एक समय अन्तर प्राप्त होता है।

शंका—औदारिकमिश्रकाययोगी तो अपर्याप्त अवस्थामें होता है जब कि जीवके मनयोग और वचनयोग होता ही नहीं है. अतएव औदारिकमिश्रकाययोगका एक समय अन्तर किस प्रकार हो सकता है ?

समाधान—नहीं; क्योंकि औदारिकमिश्रकाययोगसे एक विग्रह करके कार्मणकाय योगमें एक समय रहकर दूसरे समयमें औदारिकमिश्रयोगमें आये हुए जीवके औदारिक-मिश्रकाययोगका एक समय अन्तर प्राप्त हो जाता है।

औदारिककाययोगी व औदारिकमिश्रकाययोगी जीवोंका उत्कृष्ट अन्तर सातिरेक तेतीस सागरोपमप्रमाण होता है ॥ ६७ ॥

---

१ अ. क. प्रत्योः वच्चिजोग इति पाठः।

कुदो ? ओरालियकायजोगादो चत्तारिमण-चत्तारिवचिजोगेसु परिणमिय कालं करिय तेत्तीसाउट्ठिदिएसु देवेसुववज्जिय सगट्ठिदिमच्छिय दो विग्गहे काढूण मणुस्सेसुप्पज्जिय ओरालियमिस्सकायजोगेण दीहकालमच्छिय पुणो ओरालियकायजोगं गदस्स णवहि अंतोमुहुत्तेहि बेहि[1] समएहि सादिरेयतेत्तीससागरोवममेत्तंतरुवलंभादो । एवमोरालियमिस्सकायजोगस्स वि अंतरं वत्तव्वं । णवरि अंतोमुहुत्तूणपुव्वकोडीए सादिरेयाणि तेत्तीससागरोवमाणि अंतरं होदि, णेरइएहिंतो पुव्वकोडाउअमणुस्सेसुप्पज्जिय ओरालियमिस्सकायजोगस्स आदिं करिय सव्वलहुं पज्जत्तीओ समाणिय ओरालियकायजोगेणंतरिय पुव्वकोडिं देसूणं गमिय तेत्तीसाउट्ठिदिदेवेसुप्पज्जिय पुणो विग्गहे काढूण ओरालियमिस्सकायजोगं गदस्स तदुवलंभादो ।

वेउव्वियकायजोगीणमंतरं केवचिरं कालादो होदि ? ॥ ६८ ॥

सुगमं ।

क्योंकि, औदारिककाययोगसे चार मनोयोगों व चार वचनयोगोंमें परिणमित हो मरण कर तेतीस सागरोपमप्रमाण आयुस्थितिवाले देवोंमें उत्पन्न होकर, वहां अपनी स्थितिप्रमाण रहकर, पुनः दो विग्रह करके मनुष्योंमें उत्पन्न हो औदारिकमिश्रकाययोगके साथ दीर्घ काल तक रहकर, पुनः औदारिककाययोगको प्राप्त हुए जीवके नौ अन्तर्मुहूर्तों व दो समयोंसे अधिक तेतीस सागरोपमप्रमाण औदारिककाययोगका अन्तर प्राप्त होता है ।

इसी प्रकार औदारिकमिश्रकाययोगका भी अन्तर कहना चाहिये । केवल विशेषता यह है कि औदारिकमिश्रकाययोगका अन्तर अन्तर्मुहूर्त कम पूर्वकोटिसे अधिक तेतीस सागरोपमप्रमाण होता है, क्योंकि, नारकियोंसे निकलकर, पूर्वकोटि आयुवाले मनुष्योंमें उत्पन्न हो औदारिकमिश्रकाययोगका प्रारंभ कर, कमसे कम कालमें पर्याप्तियोंको पूर्ण करके औदारिककाययोगके द्वारा औदारिकमिश्रकाययोगका अन्तर कर, कुछ कम पूर्वकोटि काल व्यतीत करके तेतीस सागरोपमकी आयुवाले देवोंमें उत्पन्न हो, पुनः विग्रह करके औदारिकमिश्रकाययोगमें प्राप्त होनेवाले जीवके उक्त कालप्रमाण अन्तर पाया जाता है ।

वैक्रियिककाययोगी जीवोंका अन्तर कितने काल तक होता है ? ॥ ६८ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

---

१ अ. प्रती 'वेहि' इति पाठः ।

जहण्णेण एगसमओ ॥ ६९ ॥

वेउव्वियकायजोगादो मणजोगं वचिजोगं वा गंतूण तत्थ एगसमयमच्छिय[1] बिदियसमए वाघादवसेण वेउव्वियकायजोगं गदस्स तदुवलंभादो ।

उक्कस्सेण अणंतकालमसंखेज्जपोग्गलपरियट्टं ॥ ७० ॥

अंतरस्स पाहण्णियादो एगवयणं णवुंसयत्तं च जुज्जदे । सेसं सुगमं ।

वेउव्वियमिस्सकायजोगीणमंतरं केवचिरं कालादो होदि? ॥७१॥

सुगमं ।

जहण्णेण दसवाससहस्साणि सादिरेयाणि ॥ ७२ ॥

कुदो ? तिरिक्खेहिंतो मणुस्सेहिंतो वा देवेसु णेरइएसु वा उप्पज्जिय दीहकालेण छप्पज्जत्तीओ[2] समाणिय वेउव्वियकायजोगेण अंतरिय देसूणदसवाससहस्साणि अच्छिय तिरिक्खेसु मणुस्सेसु वा उप्पज्जिय सव्वजहण्णेण कालेण पुणो आगंतूण वेउव्वियमिस्सं

वैक्रियिककाययोगियोंका जघन्य अन्तर एक समय है ॥ ६९ ॥

क्योंकि, वैक्रियिककाययोगसे मनयोग या वचनयोगमें जाकर वहां एक समय तक रहकर दूसरे समयमें उस योगका व्याघात हो जानेके कारण वैक्रियिकाययोगको प्राप्त करनेवाले जीवके एक समयप्रमाण वैक्रियिककाययोगका अन्तर पाया जाता है ।

वैक्रियिकमिश्रकाययोगियोंका उत्कृष्ट अन्तर अनन्त काल है, जो असंख्यात पुद्गलपरिवर्तन बराबर है ॥ ७० ॥

सूत्रमें जो अनन्तकाल व असंख्यातपुद्गलपरिवर्तन इन दोनों शब्दोंमें एकवचन और नपुंसकलिंगका प्रयोग किया गया है वह अन्तरकी प्रधानता बतलानेके लिये है और इसलिये उपयुक्त है । शेष सूत्रार्थ सुगम है ।

वैक्रियिककाययोगियोंका अन्तर कितने काल तक होता है ? ॥ ७१ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वैक्रियिकमिश्रकाययोगियोंका जघन्य अन्तर कुछ अधिक दश हजार वर्ष प्रमाण होता है ॥ ७२ ॥

क्योंकि, तिर्यंचोंसे अथवा मनुष्योंसे देवों या नारकियोंमें उत्पन्न होकर दीर्घ काल द्वारा छह पर्याप्तियां पूरी कर वैक्रियिककाययोगके द्वारा वैक्रियिकमिश्रकाययोगका अन्तर करके कुछ कम दश हजार वर्ष तक वहीं रहकर, तिर्यंचों अथवा मनुष्योंमें उत्पन्न हो, सबसे कम कालमें पुनः देव या नारक गतिमें आकर वैक्रियिकमिश्रयोगको प्राप्त

---

१ अ. स. प्रत्योः–एगसमयमच्छिय इति पाठः ।

२ अ. स. प्रत्योः उप्पज्जत्तिस्स आ. क. प्रती पज्जत्तीओ इति पाठः ।

गदस्स सादिरेयदसवस्ससहस्समेत्तंतरुवलंभादो। कधमेदेसिं सादिरेयत्तं ? ण, वेउव्वियमिस्सद्धादो तिरिक्ख-मणुस्सपज्जत्ताणं गब्भजाणं जहण्णाउवस्स बहुत्तुवलंभादो।

उक्कस्सेण अणंतकालमसंखेज्जपोग्गलपरियट्टं ॥ ७३ ॥

कुदो ? वेउव्वियमिस्सकायजोगादो वेउव्वियकायजोगं गंतूणंतरिय असंखेज्जपोग्गलपरियट्टाणि परियट्टिय वेउव्वियमिस्सं गदस्स तदुवलंभादो।

आहारकायजोगि – आहारमिस्सकायजोगीणमंतरं केवचिरं कालादो होदि ? ॥ ७४ ॥

सुगमं।

जहण्णेण अंतोमुहुत्तं ॥ ७५ ॥

कुदो ? आहारकायजोगादो अण्णजोगं गंतूण सव्वलहुत्तमच्छिय पुणो

हुए जीवके सातिरेक दस हजार वर्षप्रमाण वैक्रियिकमिश्रकाययोगका जघन्य अन्तर पाया जाता है।

शंका– इन दस हजार वर्षोंके सातिरेकता कैसे है।

समाधान– नहीं, क्योंकि, वैक्रियिकमिश्रयोगके कालकी अपेक्षा तिर्यंच व मनुष्य पर्याप्त गर्भज जीवोंकी जघन्य आयु बहुत पायी जाती है।

वैक्रियिकमिश्रकाययोगियोंका उत्कृष्ट अन्तर अनन्त काल है जो असंख्यात पुद्गलपरिवर्तनप्रमाण के बराबर है ॥ ७३ ॥

क्योंकि, वैक्रियिकमिश्रकाययोगसे वैक्रियिककाययोगमें जाकर, वैक्रियिकमिश्रकाययोगका अन्तर प्रारंभ कर, असंख्यात पुद्गलपरिवर्तन काल तक परिभ्रमण कर पुनः वैक्रियिकमिश्रकाययोगमें आनेवाले जीवके सूत्रोक्त प्रमाण अन्तर पाया जाता है।

आहारककाययोगी और आहारकमिश्रकाययोगी जीवोंका अन्तर कितने काल तक होता है ? ॥ ७४ ॥

यह सूत्र सुगम है।

आहारककाययोगी और आहारकमिश्रकाययोगी जीवोंका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त होता है ॥ ७५ ॥

क्योंकि, आहारककाययोगसे अन्य योगको जाकर सबसे कम अन्तर्मुहूर्त रहकर

आहारकायजोगं गदस्स अंतोमुहुत्तंतरुवलंभादो । एगसमओ किण्ण लब्भदे ? ण, आहारकायजोगस्स वाघादाभावादो । एवमाहारमिस्सकायजोगस्स वि वत्तव्वं । णवरि आहारसरीरमुट्ठाविय सव्वजहण्णेण कालेण पुणो वि उट्ठावेंतस्स पढमए[1] अंतरपरिसमत्ती कायव्वा ।

उक्कस्सेण अद्धपोग्गलपरियट्टं देसूणं ॥ ७६ ॥

कुदो ? अणादियमिच्छादिट्ठिस्स अद्धपोग्गलपरियट्टादिसमए उवसमसम्मत्तं संजमं च जुगवं घेत्तूण अंतोमुहुत्तमच्छिय (१) अप्पमत्तो होदूण (२) आहारसरीरं बंधिय (३) पडिभग्गो होदूण (४) आहारसरीरमुट्ठाविय अंतोमुहुत्तमच्छिय (५) आहारकायजोगी होदूण आदिं करिय एगसमयमच्छिय कालं काऊण अंतरिय उवड्ढपोग्गलपरियट्टं भमिय अंतोमुहुत्तावसेसे संसारे अद्धमंतरं करिय (६) अंतोमुहुत्तमच्छिय (७) अबंधभावं

पुनः आहारककाययोगको प्राप्त हुए जीवके आहारककाययोगका अन्तर्मुहूर्तप्रमाण अन्तर पाया जाता है ।

शंका– आहारकाययोगका एक समयमात्र अन्तर क्यों नहीं प्राप्त होता ?

समाधान– नहीं, क्योंकि, आहारकाययोगका व्याघात नहीं होता ।

इसी प्रकार आहारमिश्रकाययोगका भी अन्तर कहना चाहिये । केवल विशेषता यह है कि आहारशरीरको उत्पन्न करके सबसे कम कालमें फिरभी आहारशरीरको उत्पन्न करनेवाले जीवके पहले ही अन्तरकी समाप्ति करदेनी चाहिये ।

आहारककाययोगी और आहारकमिश्रकाययोगी जीवोंका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अर्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण होता है ।। ७६ ।।

क्योंकि, अनादि मिथ्यादृष्टि एक जीवने अर्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण संसार शेष रहनेके प्रथम समयमें उपशमसम्यक्त्व और संयम इन दोनोंका एक साथ ग्रहण किया और अन्तर्मुहूर्त रहकर (१) अप्रमत्त होकर (२) आहारशरीरको बंध करके (३) प्रतिभग्न अर्थात् अप्रमत्तसे च्युत हो हो प्रमत्त होकर (४) आहारशरीरको उत्पन्न करके अन्तर्मुहूर्त रहा (५) और आहारकाययोगी होकर उसका प्रारंभ करके व एक समय रहकर मर गया । इस प्रकार आहारकाययोगका अन्तर प्रारंभ हुआ । पश्चात् वही जीव उपार्धपुद्गलपरिवर्त प्रमाण काल तक भ्रमण करके संसारके अन्तर्मुहूर्तमात्र शेष रहनेपर कुछ कम अर्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण अन्तरकाल समाप्त कर (६) अन्तर्मुहूर्त रहकर (७) अबंधकभावको प्राप्त

१ म प्रती पढमसमए इति पाठः ।

गयस्स जहाकमेण अट्ठहि सत्तहि अंतोमुहुत्तेहि ऊणअद्धपोग्गलपरियट्टमेत्तंतरुवलंभादो ।

कम्मइयकायजोगीणमंतरं केवचिरं कालादो होदि ? ॥ ७७ ॥

सुगमं ।

जहण्णेण खुद्दाभवग्गहणं तिसमऊणं ॥ ७८ ॥

तिण्णि विग्गहे काऊण खुद्दाभवग्गहणम्मि उप्पज्जिय पुणो विग्गहं काऊण णिग्गयस्स तिसमऊणखुद्दाभवग्गहणमेत्तंतरुवलंभादो ।

उक्कस्सेण अंगुलस्स असंखेज्जदिभागो असंखेज्जासंखेज्जाओ ओसप्पिणि-उस्सप्पिणीओ ॥ ७९ ॥

कुदो ? कम्मइयकायजोगादो ओरालियमिस्सं वेउव्वियमिस्सं वा गंतूण असंखेज्जासंखेज्जओसप्पिणी-उस्सप्पिणीओ अंगुलस्स[2] असंखेज्जदिभागमेत्तकालमच्छिय विग्गहं

होगया । ऐसे जीवके यथाक्रम आठ या सात अर्थात् आहारककाययोगका आठ और आहारकमिश्रकाययोगका सात अन्तर्मुहूर्तसे कम अर्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण अन्तरकाल पाया जाता है ।

कार्मणकाययोगी जीवोंका अन्तर कितने काल तक होता है ? ॥ ७७ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

कार्मणकाययोगियोंका जघन्य अन्तर तीन समय कम क्षुद्रभवग्रहणप्रमाण होता है ॥ ७८ ॥

क्योंकि, तीन विग्रह करके क्षुद्रभवग्रहण करनेवाले जीवोंमें उत्पन्न हो पुनः विग्रह करके निकलनेवाले जीवके तीन समय कम क्षुद्रभवग्रहणप्रमाण कार्मणकाययोगका जघन्य अन्तर प्राप्त होता है ।

कार्मणकाययोगियोंका उत्कृष्ट अन्तर असंख्यातासंख्यात अवसर्पिणी-उत्सर्पिणी काल प्रमाण होता है जो अंगुलके असंख्यातवें भागप्रमाणके बराबर होता है ॥ ७९ ॥

क्योंकि, कार्मणकाययोगसे औदारिकमिश्र अथवा वैक्रियिकमिश्र काययोगमें जाकर अंगुलके असंख्यातवें भागबार असंख्यातासंख्यात अवसर्पिणी-उत्सर्पिणीप्रमाण काल तक रहकर पुनः विग्रहगतिको प्राप्त हुए जीवके कार्मणकाययोगका सूत्रोक्त अन्तर-

---

१ अ. आ. प्रत्योः सुगमं इति पाठो नास्ति ।

२ मू. प्रतौ उस्सप्पिणीपमाणमंगुलस्स इति

गदस्स तदुवलंभादो ।

वेदाणुवादेण इत्थिवेदाणमंतरं केवचिरं कालादो होदि? ॥ ८० ॥

सुगमं ।

जहण्णेण खुद्दाभवग्गहणं ॥ ८१ ॥

सुगमं ।

उक्कस्सेण अणंतकालमसंखेज्जपोग्गलपरियट्टं ॥ ८२ ॥

कुदो ? इत्थिवेदादो णिग्गयस्स पुरिस-णवुंसयवेदेसु चेव भमंतस्स आवलियाए असंखेज्जदिभागमेत्तपोग्गलपरियट्टाणमंतरसरूवेणुवलंभादो ।

पुरिसवेदाणमंतरं केवचिरं कालादो होदि ? ॥ ८३ ॥

सुगमं ।

जहण्णेण एगसमओ ॥ ८४ ॥

कुदो ? पुरिसवेदेणुवसमसेडिं चडिय अवगदवेदो होदूण एगसमयमंतरिय

काल पाया जाता है ।

वेदमार्गणानुसार स्त्रीवेदी जीवोंका अन्तर कितने काल तक होता है? ॥ ८० ॥

यह सूत्र सुगम है ।

स्त्रीवेदी जीवोंका जघन्य अन्तर क्षुद्रभवग्रहणप्रमाण काल तक होता है ॥ ८१ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

स्त्रीवेदी जीवोंका उत्कृष्ट अन्तर अनन्त कालप्रमाण है, जो असंख्यात पुद्गलपरिवर्तनप्रमाण कालके बराबर है ॥ ८२ ॥

क्योंकि, स्त्रीवेदसे निकलकर पुरुषवेद और नपुंसकवेदमें ही भ्रमण करनेवाले जीवके आवलीके असंख्यातवें भागप्रमाण पुद्गलपरिवर्तनरूप स्त्रीवेदका अन्तरकाल प्राप्त हो जाता है ।

पुरुषवेदियोंका अन्तर कितने काल तक होता है ? ॥ ८३ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

पुरुषवेदियोंका जघन्य अन्तर एक समय होता है ॥ ८४ ॥

क्योंकि, पुरुषवेद सहित उपशमश्रेणीको चढकर अपगतवेदी हो एक समयप्रमाण

बिदियसमए कालं काऊण पुरिसवेदसुप्पण्णस्स एगसमयमेत्तंतरुवलंभादो ।

उक्कस्सेण अणंतकालमसंखेज्जपोग्गलपरियट्टं ॥ ८५ ॥

सुगमं ।

णवुंसयवेदाणमंतरं केवचिरं कालादो होदि ? ॥ ८६ ॥

सुगमं ।

जहण्णेण अंतोमुहुत्तं ॥ ८७ ॥

खुद्दाभवग्गहणं किण्ण लब्भदे ? (ण,)[1] अपज्जत्तएसु खुद्दाभवग्गहणमेत्ता-उट्ठिएविसु णवुंसयवेदं मोत्तूण इत्थि-पुरिसवेदाणमणुवलंभादो, पज्जत्तएसु वि अंतोमुहुत्तं खुद्दाभवग्गहणस्स अणुवलंभादो ।

उक्कस्सेण सागरोवमसदपुधत्तं ॥ ८८ ॥

कुदो ? णवुंसयवेदादो णिग्गयस्स इत्थि-पुरिसवेदसु चेव हिंडंतस्स सागरोवम-

---

पुरुषवेदका अन्तर करके दूसरे समयमें मरण कर पुरुषवेदी जीवोंमें उत्पन्न होनेवाले जीवके पुरुषवेदका एक समयप्रमाण अन्तर पाया है ।

पुरुषवेदियोंका उत्कृष्ट अन्तर अनन्त काल है, जो असंख्यात पुद्‌गलपरिवर्तन-प्रमाणके बराबर होता है ॥ ८५ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

नपुंसकवेदियोंका अन्तर कितने काल तक होता है ? ॥ ८६ ॥

यह सूत्र भी सुगम है ।

नपुंसकवेदियोंका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त होता है ॥ ८७ ॥

शंका—नपुंसकवेदी जीवोंका जघन्य अन्तर क्षुद्रभवग्रहणप्रमाण क्यों नहीं प्राप्त हो सकता ?

समाधान—नहीं क्योंकि क्षुद्रभवग्रहणप्रमाण आयुवाले अपर्याप्तक जीवोंमें नपुंसक-वेदको छोडकर स्त्री व पुरुषवेद नहीं पाया जाता, और पर्याप्तकोंमें अन्तर्मुहूर्तके सिवाय क्षुद्रभवग्रहणप्रमाण काल नहीं पाया जाता ।

नपुंसकवेदियोंका उत्कृष्ट अन्तर सागरोपमशतपृथक्त्वप्रमाण होता है ॥ ८८ ।

---

१ अ. व. स. प्रतिषु (ण) इति पाठो नास्ति ।

सगपुधत्तादो उवरि तत्थावट्ठाणाभावादो ।

अवगदवेदाणमंतरं केवचिरं कालादो होदि ? ॥ ८९ ॥

सुगमं ।

उवसमं पडुच्च जहण्णेण अंतोमुहुत्तं ॥ ९० ॥

कुदो ? उवसमसेडीदो ओयरिय सव्वजहण्णमंतोमुहुत्तं सवेदी होदूणंतरिय पुणो उवसमसेडिं चडिय अवेदत्तं गयस्स तदुवलंभादो ।

उक्कस्सेण अद्धपोग्गलपरियट्टं देसूणं ॥ ९१ ॥

कुदो? अणादियमिच्छाइट्ठिस्स तिण्णि वि करणाणि काऊण अद्धपोग्गलपरियट्टस्सादिसमए सम्मत्तं संजमं च जुगवं घेत्तूण अंतोमुहुत्तमच्छिय उवसमसेडिं चडिय अवगदवेदो होदूण हेट्ठा ओयरिय सवेदो होदूण अंतरिय उवड्ढपोग्गलपरियट्टं भमिय पुणो अंतोमुहुत्तावसेसे संसारे उवसमसेडिं चडिय अवगदवेदो होदूण अंतरं समाणिय पुणो

जीवके सागरोपमशतपृथक्त्वप्रमाण ऊपर वहां रहना संभव नहीं है ? ।

अपगतवेदी जीवोंका अन्तर कितने काल तक होता है ? ॥ ८९ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

उपशम अपेक्षा अपगतवेदी जीवोंका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्तमात्र होता है ॥ ९० ॥

क्योंकि, उपशमश्रेणीसे उतरकर सबसे कम अन्तर्मुहूर्तप्रमाण कालतक सवेदी होकर अपगतवेदका अन्तर कर पुनः उपशमश्रेणीपर चढ़कर अपगतवेदभावको प्राप्त होनेवाले जीवके अपगतवेदियोंका अन्तर्मुहूर्तप्रमाण अन्तर पाया जाता है ।

उपशमकी अपेक्षा अपगतवेदी जीवोंका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अर्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण होता है ॥ ९१ ॥

क्योंकि, किसी अनादिमिथ्यादृष्टि जीवने तीनों ही करण करके अर्धपुद्गलपरिवर्तके प्रथम समयमें सम्यक्त्व और संयमको एक साथ ग्रहण किया और अन्तर्मुहूर्त रहकर उपशमश्रेणीपर चढ़कर अपगतवेदी होगया । वहांसे फिर नीचे उतरकर सवेदी हो अपगतवेदका अन्तर प्रारंभ किया और उपार्धपुद्गलपरिवर्तप्रमाण कालतक भ्रमण कर पुनः संसारके अन्तर्मुहूर्तमात्र शेष रहनेपर उपशमश्रेणीपर चढ़कर अपगतवेदी हो अन्तरको समाप्त किया । पश्चात् फिर नीचे उतरकर क्षपकश्रेणीपर चढ़कर अबन्धकभाव

तत्तो ओयरिय खवगसेडिं चडिय अबंधभावं गयस्स तदुवलंभादो ।

खवगं पडुच्च णत्थि अंतरं णिरंतरं ॥ ९२ ॥

कुदो ? खवगाणमवगदवेदाणं पुणो वेदपरिणामाणुप्पत्तीदो ।

कसायाणुवादेण कोधकसाई-माणकसाई-मायकसाई-लोभकसाई णमंतरं केवचिरं कालादो होदि ? ॥ ९३ ॥

सुगमं ।

जहण्णेण एगसमओ ॥ ९४ ॥

कुदो ? कोधेण अच्छिय माणादिं[1] गदबिदियसमए वाघादेण, कालं कादूण णेरइएसु उप्पादेण वा, आगदकोधोदयस्स एगसमयअंतरुवलंभादो । एवं चेव सेसकसायाणमेगसमयअंतरपरूवणा कायव्वा । णवरि वाघादे अंतरस्स एगसमओ णत्थि, वाघादे कोधस्सेव उदयदंसणादो । किंतु मरणेण एगसमओ वत्तव्वो, मणुस्स-तिरिक्ख-देवेसुप्पण्णपढमसमए माण-माया-लोहाणं णियमेणुदयदंसणादो ।

प्राप्त किया । इस प्रकार अपगतवेदियोंका कुछ कम अर्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण अन्तरकाल प्राप्त हो जाता है ।

क्षपककी अपेक्षा अपगतवेदी जीवोंका अन्तर नहीं होता, निरन्तर है ॥ ९२ ॥

क्योंकि, क्षपकश्रेणी चढनेवालोंके एक वार अपगतवेदी हो जानेपर पुनः वेदपरिणामकी उत्पत्ति नहीं होती ।

कषायमार्गणानुसार क्रोधकषायी, मानकषायी, मायाकषायी और लोभकषायी जीवोंका अन्तर कितने काल तक होता है ? ॥ ९३ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

क्रोधादि चार कषायवाले जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय होता है ॥ ९४ ॥

क्योंकि, क्रोधकषायके साथ रहकर मानादिकषायमें जानेके दूसरे ही समयमें व्याघातसे अथवा मरणकर नारकी जीवोंमें उत्पत्ति हो जानेसे क्रोधके उदयको प्राप्त हुए जीवके क्रोधकषायका एक समयमात्र अन्तरकाल प्राप्त होता है । इसी प्रकार शेष कषायोंके भी अन्तरकी प्ररूपणा करनी चाहिये । केवल विशेषता यह है कि मानादि कषायोंके व्याघातके होनेपर एक समयप्रमाण अन्तरकाल नहीं होता, क्योंकि, व्याघात होनेपर क्रोधका ही उदय देखा जाता है । किन्तु मरणके द्वारा मानादि कषायोंका एक समयप्रमाण अन्तर कहना चाहिये, क्योंकि मनुष्य, तिर्यंच व देवोंमें उत्पन्न हुए जीवके प्रथम समयमें क्रमशः मान, माया व लोभका नियमसे उदय देखा जाता है ।

---

१ मू. प्रतौ माणादिवद इति पाठः । २ ब. प्रतौ आगदा इति पाठः ।

उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं ॥ ९५ ॥

अप्पिदकसायादो अणप्पिदकसायं गंतूणुक्कस्समंतोमुहुत्तमच्छिय अप्पिदकसायमागदस्स तदुवलंभादो ।

अकसाई अवगदवेदाण भंगो ॥ ९६ ॥

कुदो[1] ? जहण्णेण अंतोमुहुत्तं, उक्कस्सेण उवड्ढपोग्गलपरियट्टं; खवगं पडुच्च णत्थि अंतरमिच्चेदेहि तत्तो भेदाभावादो ।

णाणाणुवादेण मदिअण्णाणी-सुदअण्णाणीणमंतरं केवचिरं कालादो होदि ? ॥ ९७ ॥

सुगमं ।

जहण्णेण अंतोमुहुत्तं ॥ ९८ ॥

कुदो? मदि-सुदअण्णाणेहिंतो सम्मत्तं घेत्तूण सण्णाणेसु जहण्णकालमंतरिय पुणो

क्रोधादि चार कषायवाले जीवोंका उत्कृष्ट अतन्र अन्तर्मुहूर्तप्रमाण है ।। ९५ ।।

क्योंकि, विवक्षित कषायसे अविवक्षित कषायमें आकर उत्कृष्टसे अन्तर्मुहूर्तप्रमाण काल तक रहकर विविक्षित कषायमें आये हुए जीवके उस कषायका अन्तर्मुहूर्तप्रमाण अन्तरकाल प्राप्त होता है ।

अकषायवाले जीवोंका अन्तर अपगतवेदी जीवोंके समान होता है ।। ९६ ।।

क्योंकि, इन जीवोंका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट अन्तर उपार्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण होता है । क्षपककी अपेक्षा अन्तर नहीं होता, निरन्तर है । इस प्रकार इस अपेक्षासे अकषायवाले जीवोंके अन्तरमें–अपगतवेदियोंके अन्तरसे भेद नहीं है ।

ज्ञानमार्गणानुसार मतिअज्ञानी और श्रुतअज्ञानी जीवोंका अन्तर कितने काल तक होता है ? ।। ९७ ।।

यह सूत्र सुगम है ।

मतिअज्ञानी और श्रुतज्ञानी जीवोंका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्तप्रमाण होता है ।। ९८ ।।

क्योंकि, मतिअज्ञान व श्रुतअज्ञानसे सम्यक्त्व ग्रहणकर मतिज्ञान व श्रुतज्ञानमें आकर जघन्य कालका अन्तर देकर पुनः मतिअज्ञान व श्रुतअज्ञानको प्राप्त

---

१ अ. ब. क. प्रतिषु कुदो (खवगं पडुच्च) जहण्णेण इति पाठो नास्ति ।

मदि-सुदअण्णाणि[1] गदस्स तदुवलंभादो ।

उक्कस्सेण बेछावट्ठिसागरोवमाणि देसूणाणि[2] ॥ ९९ ॥

कुदो ? मदि-सुदअण्णाणिस्स सम्मत्तं घेत्तूण सण्णाणेसु छावट्ठि[3] सागरोवमाणि देसूणाणि अंतरिय[4] पुणो सम्मामिच्छत्तं गंतूण मिस्सणाणेहि अंतरिय पुणो सम्मत्तं घेत्तूण छावट्ठि[5] सागरोवमाणि देसूणाणि भमिय मिच्छत्तं गदस्स तदुवलंभादो । कुदो देसूणत्तं ? उवसमसम्मत्तकालादो बेछावट्ठिअब्भंतरमिच्छत्तकालस्स बहुत्तुवलंभादो । सम्मामिच्छादिट्ठीणाणं मदि-सुदअण्णाणमिदि कट्टु केइमाइरिया सम्मामिच्छत्तेण णांतरावेंति । तण्ण घडदे, सम्मामिच्छत्तभावायत्तणाणस्स सम्मामिच्छत्तं व[6] पत्तजच्चंतरस्स मदि-सुदअण्णाणत्तविरोहादो ।

विभंगणाणीण मंतरं केवचिरं कालादो होदि ? ॥ १०० ॥

हुए जीवके अन्तर्मुहूर्तप्रमाण अन्तरकाल पाया जाता है ।

मतिअज्ञानी और श्रुतअज्ञानी जीवोंका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम दो छयासठ सागरोपम अर्थात् एक सौ बत्तीस सागरोपम काल होता है ॥ ९९ ॥

क्योंकि, किसी मति-श्रुतअज्ञानी जीवके सम्यक्त्वको ग्रहण करके सम्यग्ज्ञानद्वारा कुछ कम छयासठ सागरोपम कालप्रमाण अन्तर देकर, पुनः सम्यग्मिथ्यात्वको जाकर मिश्रज्ञानोंका अन्तर देकर पुनः सम्यक्त्व ग्रहण करके कुछ कम छयासठ सागरोपमप्रमाण काल तक परिभ्रमण कर मिथ्यात्वको प्राप्त होनेवालेके दो छयासठ सागरोपमप्रमाण मतिश्रुत अज्ञानोंका अन्तरकाल पाया जाता है ।

शंका—दो छयासठ सागरोपमोंमें जो कुछ कम काल बतलाया है वह क्यों ?

समाधान—क्योंकि, उपशमसम्यक्त्वकालसे दो छयासठ सागरोपमोंके भीतर मिथ्यात्वका काल अधिक पाया जाता है । (देखो पु. ५, पृ. ६, अन्तरानुगम सूत्र ४ की टीका) ।

सम्यग्मिथ्यादृष्टिकेज्ञानको मति-श्रुत अज्ञानरूप मानकर कितने ही आचार्य पूर्वोक्त अन्तर प्ररूपणामें सम्यग्मिथ्यात्वके साथ अन्तर नहीं करते । पर यह बात घटित नहीं होती, क्योंकि, सम्यग्मिथ्यात्वभावके आधीन हुआ ज्ञान सम्यग्मिथ्यात्वके समान प्राप्त वह ज्ञान एक अन्य जातिका बन जाता है अतः उस ज्ञानको मति-श्रुत अज्ञान रूप माननेमें विरोध आता है ।

विभंगज्ञानियोंका अन्तर कितने काल होता है ? ॥ १०० ॥

---

१ म. प्रतौ सुदअण्णाणी इति पाठः । २ मु. प्रतौ देसूणाणि इति पाठो नास्ति । ३ अ. प्रतौ बेछावट्ठि इति पाठो नास्ति । ४ मु. प्रतौ देसूणाणि सण्णाणेसु अंतरिय इति पाठो नास्ति । ५ मु. प्रतौ छावट्ठि इति पाठः । ६ अ. प्रतौ 'च' इति पाठः ।

सुगमं ।

जहण्णेण अंतोमुहुत्तं ॥ १०१ ॥

कुदो ? देवस्स णेरइयस्स वा विभंगणाणिस्स दिट्ठमग्गस्स सम्मत्तं घेत्तूण ओहिणाणेण सहजहण्णमंतोमुहुत्तमच्छिय विभंगणाणं मिच्छत्तं च जुगवं पडिवण्णस्स जहण्णंतरुवलंभादो ।

उक्कस्सेण अणंतकालमसंखेज्जपोग्गलपरियट्टं ॥ १०२ ॥

कुदो ? विभंगणाणादो मदिअण्णाणं गंतूणंतरिय आवलियाए असंखेज्जदिभाग-मेत्तपोग्गलपरियट्टे परियट्टिदूण विभंगण्णाणं गदस्स तदुवलंभादो ।

आभिणिबोहिय-सुद-ओहि-मणपज्जवणाणीणमंतरं केवचिरं कालादो होदि ? ॥ १०३ ॥

सुगमं ।

जहण्णेण अंतोमुहुत्तं ॥ १०४ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

विभंगज्ञानियोंका जघन्य अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है ॥ १०१ ॥

क्योंकि, जिसने सम्यक्त्वको प्राप्त करनेका मार्ग देखलिया है ऐसे एक विभंगज्ञानी देव या नारकी जीवके सम्यक्त्व ग्रहण कर अवधिज्ञानके साथ जघन्य अन्तर्मुहूर्त कालतक रहकर विभंगज्ञान और मिथ्यात्वको एक साथ प्राप्त होनेपर विभंगज्ञानका अन्तर्मुहूर्तप्रमाण जघन्य अन्तर प्राप्त होता है ।

विभंगज्ञानियोंका उत्कृष्ट अन्तर अनन्त कालहै जो असंख्यात पुद्गलपरिवर्तनके बराबर होता है ॥ १०२ ॥

क्योंकि, विभंगज्ञानसे मतिअज्ञानको प्राप्त कर अन्तर प्रारंभ कर आवलीके असंख्यातवें भागमात्र पुद्गलपरिवर्तन प्रमाण कालतक परिभ्रमण कर विभंगज्ञानको प्राप्त होनेवाले जीवके विभंगज्ञानका सूत्रोक्त अन्तर काल पाया जाता है ।

आभिनिबोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी, अवधिज्ञानी और मनःपर्ययज्ञानी जीवोंका अन्तर कितने काल होता है ? ॥ १०३ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

आभिनिबोधिक आदि उक्त चार ज्ञानियोंका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त होता है ॥ १०४ ॥

---

१ म. प्रतौ सव्व जहण्ण इति पाठः

कुदो? मदि-सुद-ओहिणाणेसु ट्ठिददेवस्स णेरइयस्स वा मिच्छत्तं गंतूण मदि-सुद-विभंगअण्णाणेहि अंतरिय पुणो मदि-सुद-ओहिणाणमागदस्स जहण्णेणंतोमुहुत्तंतरुवलंभादो। एवं मणपज्जवणाणस्स वि। णवरि मणपज्जवणाणी संजदो तण्णाणं विणासिय अंतोमुहुत्तमच्छिय तस्सेव णाणस्स पुणो आणेदव्वो।

उक्कस्सेण अद्धपोग्गलपरियट्टं देसूणं ॥ १०५ ॥

कुदो? अणादियमिच्छाइट्ठिस्स अद्धपोग्गलपरियट्टस्स पढमसमए उवसमसम्मत्तं पडिवज्जिय तत्थेव देव-णेरइएसु विरोधाभावादो मदि सुद-ओहिणाणाणि उप्पाइय छाव लियाओ उवसमसम्मत्तद्धा अत्थि त्ति सासणं गंतूणंतरिय[1] पुणो मिच्छत्तेण अद्धपोग्गलपरियट्टं भमिय अंतोमुहुत्तावसेसे संसारे सम्मत्तं पडिवज्जिय मदि-सुदणाणाणमंतरं समा-

क्योंकि, मति, श्रुत और अवधि ज्ञानोंमें स्थित किसी देव या नारकी जीवके मिथ्यात्वमें जाकर मति अज्ञान श्रुतअज्ञान व विभंगज्ञानके द्वारा अन्तर करके पुनः मतिज्ञान श्रुतज्ञान व अवधिज्ञानमें आनेपर उक्त ज्ञानोंका अन्तर्मुहूर्तप्रमाण जघन्य अन्तर प्राप्त होता है।

इसी प्रकार मनःपर्ययज्ञानीका भी जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्तप्रमाण होता है। केवल विशेषता यह है कि मनःपर्ययज्ञानी संयत जीव मनःपर्ययज्ञानको नष्ट करके अन्तर्मुहूर्तकाल तक उस ज्ञानके विना रहकर फिर उसी ज्ञानमें लाया जाना चाहिये।

आभिनिबोधिक आदि चार ज्ञानोंका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अर्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण होता है ॥ १०५ ॥

क्योंकि, किसी अनादिमिथ्यादृष्टि जीवने अपने अर्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण कालके प्रथम समयमें उपशमसम्यक्त्व ग्रहण किया और उसी अवस्थामें मतिज्ञान, श्रुतज्ञान व अवधिज्ञान उत्पन्न किये; क्योंकि देव और नारकी जीवोंमें उक्त अवस्थामें इनके उत्पन्न होनेमें कोई विरोध नहीं आता। फिर उपशमसम्यक्त्वके कालमें छह आवली शेष रहनेपर वह जीव सासादनगुणस्थानमें गया। और इस प्रकार मतिज्ञान आदि तीनों ज्ञानोंका अन्तर प्रारंभ हो गया। फिर उसी जीवने मिथ्यात्वके साथ अर्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण काल तक भ्रमण कर संसारके अन्तर्मुहूर्तमात्र शेष रहनेपर सम्यक्त्वको ग्रहण कर लिया और इस प्रकार मति-श्रुत ज्ञानोंका अन्तर पूरा किया।

१ बेइंदियाणं भंते किं णाणी अण्णाणी? गोयमा! णाणी वि अण्णाणि वि। जे णाणी ते नियमा दुणाणी॥ तं जहा—आभिणिबोहियणाणी सुयणाणी। जे अण्णाणी ते वि नियमा दुअण्णाणी। तं जहा—मइअण्णाणी सुयअण्णाणी य। भगवती, ८, २. बेइंदियस्स दो णाणा कहं लब्भंति? भण्णइ, सासायणं पडुच्च तस्सापज्जत्तयस्स दो णाणा लब्भंति। प्रज्ञापना टीका। सासणभावे णाणं। कर्मग्रंथ ४, ४९.

णिय पुणो अंतोमुहुत्तं गंतूण ओहिणाणमुप्पाइय तत्थेव तदंतरं पि समाणिय अंतोमुहुत्तेण केवलणाणमुप्पाइय अबंधभावं गदस्स उवड्ढपोग्गलपरियट्टंतरुवलंभादो ।

एवं मणपज्जवणाणस्स वि । णवरि[1] उवसमसम्मत्तेण सह मणपज्जवणाणस्स विरोहादो पढमसम्मत्तद्धं बोलाविय मुहुत्तपुधत्ते गदे मणपज्जवणाणमादीए अंतरस्स अवसाणे च उप्पाएदव्वं ।

केवलणाणीणमंतरं केवचिरं कालादो होदि ? ॥ १०६ ॥

सुगमं ।

णत्थि अंतरं णिरंतरं ॥ १०७ ॥

कुदो ? केवलणाणे समुप्पण्णे पुणो तस्स विणासाभावादो ।

संजमाणुवादेण संजद-सामाइयछेदोवट्ठावणसुद्धिसंजद-परिहार-सुद्धिसंजद-संजदासंजदाणमंतरं केवचिरं कालादो होदि ? ॥ १०८ ॥

सुगमं ।

पश्चात् अन्तर्मुहूर्त काल व्यतीत करके उसने अवधिज्ञान उत्पन्न कर लिया और उसी अवस्थामेंही अवधिज्ञानका अन्तर पूरा किया । फिर उसने अन्तर्मुहूर्तकालसे केवलज्ञान उत्पन्न कर अबन्धकभाव प्राप्त कर लिया । ऐसे जीवके मतिज्ञान, श्रुतज्ञान और अवधिज्ञानका उपार्धपुद्गलपरिवर्तप्रमाण उत्कृष्ट अन्तर पाया जाता है ।

इसी प्रकार मनःपर्ययज्ञानका भी उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अर्धपुद्गलपरिवर्तन-प्रमाण होता है । केवल विशेषता यह है कि उपशमसम्यक्त्वसे मनःपर्ययज्ञानका विरोध होनेके कारण प्रथमोपशमसम्यक्त्वका काल समाप्त कर मुहूर्तपृथक्त्व हो जानेपर आदिमें व अन्तरके अन्तरमें मनःपर्ययज्ञानको उत्पन्न कराना चाहिये ।

केवलज्ञानियोंका अन्तर कितने काल तक होता है ? ॥ १०६ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

केवलज्ञानियोंके केवल ज्ञानका अन्तर ही नहीं है, वह ज्ञान निरन्तर है ॥ १०७ ॥

क्योंकि, केवलज्ञान उत्पन्न होनेपर फिर उसका विनाश नहीं होता ।

संयममार्गणानुसार संयत, सामायिक व छेदोपस्थापन शुद्धिसंयत, परिहार-विशुद्धिसंयत और संयतासंयत जीवोंका अन्तर कितने काल तक होता है ? ॥१०८॥

यह सूत्र सुगम है ।

---

१ अ. क. प्रत्योः णवरि इति पाठो नास्ति ।

जहण्णेण अंतोमुहुत्तं ॥ १०९ ॥

कुदो? अप्पिदसंजमट्ठिदजीवमसंजमं[1] णेदूण पुणो अप्पिदसंजमस्स जहण्णकालेण णीदे जहण्णमंतरं होदि । णवरि सामाइयच्छेदोवट्ठाणसंजदो उवसमसेडिं चडिय सुहुमसंजम-जहक्खादसंजमेसु अंतरिय पुणो हेट्ठा ओयरियस्स-सामाइय-छेदोवट्ठावणसुद्धिसंजमेसु पविदस्स जहण्णमंतरं होदि । परिहारसुद्धिसंजमादो सामाइय-छेदोवट्ठावणसुद्धिसंजमं णेदूण जहण्णेण अंतोमुहुत्तेण पुणो परिहारसुद्धिसंजममागदस्स जहण्णमंतरं होदि ।

उक्कस्सेण अद्धपोग्गलपरियट्टं देसूणं ॥ ११० ॥

कुदो ? अणादियमिच्छाइट्ठिस्स अद्धपोग्गलपरियट्टस्स आदिसमए पढमसम्मत्तं संजमं च जुगवं घेत्तूण अंतोमुहुत्तमच्छिय मिच्छत्तं गंतूणंतरिय उवड्ढपोग्गलपरियट्टं भमिय पुणो अंतोमुहुत्तावसेसे संसारे संजमं पडिवज्जिय अंतरं समाणिय अंतोमुहुत्तमच्छिय अबंधगत्तं गदस्स उवड्ढपोग्गलपरियट्टमेत्तंतरुवलंभादो । एवं सामाइय-छेदोवट्ठा-

---

संयत आदि उक्त संयमी जीवोंका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्तप्रमाण होता है ॥ १०९ ॥

क्योंकि, विवक्षित संयममें स्थित जीवको असंयममें लेजाकर जघन्य कालमें पुनः विवक्षित संयममें लानेपर उस संयमका उक्त जघन्य अन्तर प्राप्त होता है । केवल विशेषता यह है कि सामायिक व छेदोपस्थापन शुद्धिसंयत जीवके उपशम श्रेणीपर चढकर सूक्ष्मसाम्पराय व यथाख्यात संयमोंके द्वारा अन्तर देकर पुनः श्रेणीसे नीचे उतरनेपर सामायिक व छेदोपस्थान शुद्धिसयमोंमें आनेपर उन दोनों संयमोंका जघन्य अन्तर होता है । तथा परिहारशुद्धिसंयमसे सामायिक व छेदोपस्थापन शुद्धिसंयममें ले जाकर अन्तर्मुहूर्त कालसे पुनः परिहारशुद्धिसंयममें आये हुए जीवके परिहारशुद्धिसंयमका जघन्य अन्तर होता है ।

संयत आदि उक्त संयमी जीवोंका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अर्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण होता है ॥ ११० ॥

क्योंकि, किसी अनादिमिथ्यादृष्टि जीवके अर्धपुद्गलपरिवर्तप्रमाण संसार शेष रहनेके आदि समयमें प्रथमोपशमसम्यक्त्व और संयम दोनोंको एक साथ ग्रहण कर अन्तर्मुहूर्त रहकर मिथ्यात्वको जाकर अन्तर प्रारंभ करके उपार्धपुद्गलपरिवर्तप्रमाण भ्रमण कर पुनः अन्तर्मुहूर्तमात्र संसार शेष रहनेपर संयम ग्रहण कर व अन्तरकाल समाप्त कर अन्तर्मुहूर्त तक रह अबन्धकभावको प्राप्त होनेपर उक्त संयमोंका उपार्धपुद्गलपरिवर्तप्रमाण अन्तर पाया जाता है ।

इसी प्रकार सामायिक छेदोपस्थापन शुद्धिसंयतोंका अन्तर कहना चाहिये

---

१ म. संजमट्ठिदि-इतिपाठः ।

यणसुद्धिसंजदाणं, भेदाभावादो। एवं परिहारसुद्धिसंजदस्स वि। णवरि अणादियमिच्छाइट्ठी अद्धपोग्गलपरियट्टस्स आदिसमए उवसमसम्मत्तं संजमं च जुगवं घेत्तूण वासपुधत्तमच्छिय पच्छा परिहारसुद्धिसंजमं गंतूण मिच्छत्तं पुणो गमिय अंतरावेदव्वो, संजमग्गहणपढमसमयादो वासपुधत्तेण विणा परिहारसुद्धिसंजमग्गहणाभावादो। अवसाणे वि परिहारसुद्धिसंजमं गेण्हाविय[1] पच्छा सामाइयच्छेदोवट्ठावण सुहुम-जहाक्खादसंजमाणं णेदूण अबंधगो कायव्वो। एवं संजदासंजदस्स वि। णवरि अवसाणे तिण्णि वि करणाणि काऊणुवसमसम्मत्तं संजमासंजमं च गहिदपढमसमए अंतरं समाणिय अंतोमुहुत्तमच्छिय संजमं घेत्तूण अबंधगत्तं गदो त्ति वत्तव्वं।

सुहुमसांपराइयसुद्धिसंजद- जहाक्खादविहारसुद्धिसंजदाणमंतरं केवचिरं कालादो होदि ? ॥ १११ ॥

सुगमं।

क्योंकि, उनके पूर्वोक्त संयतोंके अन्तरसे इनके अन्तरमे कोई भेद नहीं है।

इसी प्रकार परिहारशुद्धिसंयतका भी अन्तर होता है। केवल विशेषता यह है कि अनादिमिथ्यादृष्टि जीवके अर्धपुद्गलपरिवर्तन प्रमाण कालके आदि समयमें उपशमसम्यक्त्व और संयमको एक साथ ग्रहण कर वर्षपृथक्त्व रहकर पश्चात परिहारशुद्धिसंयमको प्राप्त कर पुन: मिथ्यात्वमे लेजाकर अन्तर उत्पन्न करना चाहिये, क्योंकि संयम ग्रहण करनेके पश्चात् वर्षपृथक्त्वके विना परिहारशुद्धिसंयम ग्रहण नही किया जा सकता। अन्तरके अन्तमें भी परिहारशुद्धिसंयमको ग्रहण कराकर पश्चात् सामायिक व छेदोपस्थान, सूक्ष्मसाम्पराय और यथाख्यात संयमोंमें लेजाकर अबन्धक करना चाहिये।

इसी प्रकार संयतासंयत जीवका भी अन्तर उत्पन्न करना चाहिये। केवल विशेषता यह है कि अन्तमें तीनों ही करण करके उपशमसम्यक्त्व व संयमासंयमको ग्रहण करनेके प्रथम समयमें ही अन्तरकाल समाप्त कर अन्तर्मुहूर्त रहकर संयम ग्रहण कर अबन्धकभावको प्राप्त हुआ, ऐसा कहना चाहिये।

सूक्ष्मसाम्परायशुद्धिसंयतों और यथाख्यातविहारशुद्धिसंयतोंका अन्तर कितने काल प्रमाण होता है ? ॥ १११ ॥

यह सूत्र सुगम है।

---

१ अ. क. प्रत्योः 'वेण्हाविय' इति पाठः।

उवसमं पडुच्च जहण्णेण अंतोमुहुत्तं ॥ ११२ ॥

कुदो ? चडमाणस्स सुहुमसांपराइयसुद्धिसंजदस्स उवसंतकसाओ होदूण जहाक्खादेणंतरिय पुणो सुहुमसांपराइयसुद्धिसंजदे पदिदस्स तदुवलंभादो । जहाक्खादसंजमादो हेट्ठा पदिय जहण्णमंतोमुहुत्तमच्छिय पुणो कमेणुवरि चडिय उवसंतकसाओ होदूण जहाक्खादसंजमं गदस्स जहण्णंतरुवलंभादो ।

उक्कस्सेण अद्धपोग्गलपरियट्टं देसूणं ॥ ११३ ॥

कुदो ? अणादियमिच्छाइट्ठिस्स तिण्णि वि कारणाणि कादूण अद्धपोग्गलपरियट्टस्स आदिसमए पढमसम्मत्तं संजमं च जुगवं घेत्तूण अंतोमुहुत्तेण सव्वजहण्णेण उवसमसेडिं चडिय सुहुमसांपराइओ होदूण तत्थ जहण्णंतोमुहुत्तमच्छिय उवसंतकसाओ होदूण सुहुमसांपराइयसुद्धिसंजदो पुणो होदूण तस्स पढमसमए जहाक्खादसुद्धिसंजमंतरस्सादि करिय पुणो अंतोमुहुत्तेण अणियट्टिगुणट्ठाणे णिवदिय सामाइय-छेदोवट्ठावणं पदिदपढमसमए सुहुमसांपराइयसुद्धिसंजमंतरस्स आदिं करिय कमेण हेट्ठा ओयरिय

उपशमकी अपेक्षा सूक्ष्मसाम्पराय और यथाख्यात शुद्धिसंयतोंका जघन्य अन्तर काल अन्तर्मुहूर्तप्रमाण होता है ॥ ११२ ॥

क्योंकि, श्रेणी चढते हुए सूक्ष्मसाम्परायशुद्धिसंयतके उपशांतकषाय होकर यथाख्यातसंयमके द्वारा सूक्ष्मसाम्परायसंयमका अन्तर कर पुनः सूक्ष्मसाम्परायशुद्धिसंयममें गिरनेपर अन्तर्मुहूर्तमात्र अन्तरकाल पाया जाता है क्योंकि यथाख्यातसंयमसे नीचे गिरकर जघन्यसे अन्तर्मुहूर्तमात्र रहकर पुनः क्रमसे ऊपर चढकर उपशान्तकषाय होकर यथाख्यातसंयम ग्रहण करनेवाले जीवके यथाख्यातसंयमका अन्तर्मुहूर्तमात्र जघन्य अन्तर पाया जाता है ।

सूक्ष्मसाम्पराय और यथाख्यातशुद्धिसंयतोंका उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम अर्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है ॥ ११३ ॥

क्योंकि, कोई अनादिमिथ्यादृष्टि जीव तीनों ही करण करके अर्धपुद्गलपरिवर्तनके आदि समयमें प्रथमोपशमसम्यक्त्व और संयमको एक साथ ग्रहण कर सबसे कम अन्तर्मुहूर्त कालसे उपशमश्रेणीपर चढकर सूक्ष्मसाम्परायिक हुआ, और वहां जघन्यसे अन्तर्मुहूर्तमात्र रहकर उपशान्तकषाय होगया । पश्चात् पुनः सूक्ष्मसाम्परायिकशुद्धिसंयत होकर उसके प्रथम समयमें ही यथाख्यातशुद्धिसंयमका अन्तर प्रारंभ किया । पुनः अन्तर्मुहूर्त कालसे अनिवृत्तिकरण गुणस्थानमें गिरकर सामायिक व छेदोपस्थापन शुद्धिसंयमोंमें गिरनेके प्रथम समयमें सूक्ष्मसाम्परायिक शुद्धिसंयमका अन्तर प्रारंभ किया । फिर क्रमसे नीचे उतरकर उपार्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण काल तक भ्रमण कर अन्तमें

उवड्डपोग्गलपरियट्टं भमिय अवसाणे सम्मत्तं संजमं च घेत्तूणुवसमसेडिं चडिय सुहुमसांपराइओ उवसंतकसाओ च होदूण सुहुमसांपराइयसुद्धिसंजदो पुणो होदूण कमेण अंतराणि समाणिय हेट्ठा ओयरिय पुणो खवगसेडिं चडिय अबंधगत्तं गदस्स उवड्डपोग्गलपरियट्टंतरस्सुवलंभादो । खवगसेडीए दोण्हमंतराणं परिसमत्ती किण्ण कदा ? ण, उवसामगेहि एत्थ अहियारादो ।

खवगं पडुच्च णत्थि अंतरं णिरंतरं ॥ ११४ ॥

कुदो ? खवगाणं पुणो आगमणाभावादो ।

असंजदाणमंतरं केवचिरं कालादो होदि ? ॥ ११५ ॥

सुगमं ।

जहण्णेण अंतोमुहुत्तं ॥ ११६ ॥

सम्यक्त्व और संयमको एक साथ ग्रहण कर उपशमश्रेणीपर चढ़ा तथा सूक्ष्मसाम्परायिक और उपशान्तकषाय होकर पुनः सूक्ष्मसाम्परायशुद्धिसंयत होकर क्रमसे दोनों अन्तरकालोंको समाप्त कर नीचे उतरकर पुनः क्षपकश्रेणीपर चढ़ा और अबन्धकभावको प्राप्त होगया । ऐसे जीवके सूक्ष्मसाम्पराय और यथाख्यात शुद्धिसंयमका उपार्धपुद्गलपरिवर्तप्रमाण उत्कृष्ट अन्तर पाया जाता है ।

शंका— क्षपकश्रेणीमें जघन्य और उत्कृष्ट इन दोनों अन्तरोंकी परिसमाप्ति क्यों नहीं की ?

समाधान— नहीं क्योंकि यहां उपशामकोंका अधिकार है ।

क्षपककी अपेक्षा सूक्ष्मसाम्परायिक और यथाख्यातविहारशुद्धिसंयतोंका अन्तर नहीं होता, निरन्तर है ॥ ११४ ॥

क्योंकि, क्षपक जीवोंका पुनः लौटकर आनेका अभाव है ।

असंयतोंका अन्तर कितने काल तक होता है ? ॥ ११५ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

असंयतोंका जघन्य अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्तमात्र है ॥ ११६ ॥

कुदो ? असंजदस्स संजमं घेत्तूण जहण्णमंतोमुहुत्तमच्छिय पुणो असंजमं गदस्स तदुवलंभादो ।

उक्कस्सेण पुव्वकोडी देसूणं ॥ ११७ ॥

कुदो ? सण्णिपंचिंदियसम्मुच्छिमपज्जत्तयस्स छहि पज्जत्तीहि पज्जत्तयदस्स विस्समिय विसुद्धो होदूण संजमासंजमं घेत्तूणंतरिय देसूणपुव्वकोडिं जीविय कालं काऊण देवेसुप्पण्णपढमसमए समाणिदंतरस्स अंतोमुहुत्तूणपुव्वकोडिमेत्तंतरुवलंभादो ।

दंसणाणुवादेण चक्खुदंसणीणमंतरं केवचिरं कालादो होदि ? ॥ ११८ ॥

सुगमं ।

जहण्णेण खुद्दाभवग्गहणं ॥ ११९ ॥

कुदो ? जो को चक्खुदंसणी एइंदिय-बेइंदिय-तेइंदियलद्धिअपज्जत्तएसु खुद्दाभवग्गहणमेत्ताउट्ठिदिएसु अण्णदरेसु अचक्खुदंसणी होदूणुप्पज्जिय खुद्दाभवग्गहणमंतरिय पुणो चउरिंदियादिसु चक्खुदंसणी होदूणुप्पण्णो तस्स खुद्दाभवग्गहणमेत्तंतरुवलंभादो ।

क्योंकि, असंयत जीवके संयम ग्रहण कर जघन्यसे अन्तर्मुहूर्तकाल रहकर पुनः असंयमको प्राप्त होनेपर अन्तर्मुहूर्तमात्र अन्तर प्राप्त होता है ।

असंयतोंका उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम पूर्वकोटि होता है ॥ ११७ ॥

क्योंकि, किसी संज्ञी पंचेन्द्रिय सम्मूर्छिम पर्याप्त जीवने छहों पर्याप्तियोंसे पूर्ण होकर विश्राम ले विशुद्ध हो संयमसंयम ग्रहणकर असंयमका अन्तर प्रारंभ किया और कुछ कम पूर्वकोटि काल जीकर मरणकर देवोंमें उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें अन्तर समाप्त किया अर्थात् असंयमभाव ग्रहण किया । ऐसे जीवके असंयमका अन्तर्मूहूर्त कम एक पूर्वकोटिप्रमाण अन्तरकाल पाया जाता है (देखो पु. ४, कालानुगम सूत्र १८) ।

दर्शनमार्गणानुसार चक्षुदर्शनी जीवोंका अन्तर कितने काल तक होता है ? ॥ ११८ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

चक्षुदर्शनी जीवोंका अन्तरकाल क्षुद्रभवग्रहणप्रमाण होता है ॥ ११९ ॥

क्योंकि, जो चक्षुदर्शनी जीव क्षुद्रभवग्रहणमात्र आयुस्थितिवाले किसी भी एकेन्द्रिय, द्वीन्द्रिय व त्रीन्द्रिय लब्ध्यपर्याप्तकोंमें अचक्षुदर्शनी होकर उत्पन्न होता है और क्षुद्रभवग्रहणप्रमाण काल चक्षुदर्शनका अन्तर कर पुनः चतुरिन्द्रियादिक जीवोंमें चक्षुदर्शनी होकर उत्पन्न होता है उस जीवके चक्षुदर्शनका क्षुद्रभवग्रहणप्रमाण अन्तरकाल पाया जाता है ।